THE TIMES OF INDIA

Date:20-06-23

Coach Red

Kota-type exam prep factories help students clear tough entrance tests, but at great future cost

TOI Editorials

India's 23 IITs are its most internationally respected higher education brand. Of the around 11 lakh students who tried to make it into these elite institutions this year, around 43,700 have crossed the JEE Advanced hurdle. With the pass rate being only 0. 04%, successful students and their families are understandably celebrating very, very big. So are the coaching institutes that played a critical role in many of the triumphs. Kota institutes claim that 50 of the top 100 spots have been won by their students. But they have competition across the country. This year's topper V Chidvilas Reddy took coaching in Hyderabad, last year's topper RK Shishir in Bengaluru. Shishir said in as many words, "Coaching has become a necessity now. "

This is hardly unique to engineering. Medicine is the same. Indeed, when a state like Tamil Nadu wants to help more government school students clear NEET, free or heavily subsidised coaching programmes are part of the newage policy mix. The UPSC exam, which recruits central government's 'Group A' officers with a sub 0. 5% success rate, likewise is symbiotically tied to coaching factories. But despite being anchored around rote learning, this industry itself is not hidebound. Rather, it is quite nimble and adaptive. For example, no sooner did the BDesign course start trending among students that seductive coaching packages for it became available in the market. CUET has also seen that India's coaching culture races ahead of any "new" evaluation system.

The shortage of quality higher education seats means parents continue to feel pressurised to put their children into the coaching grindmill, even when they can see the toll this takes on the school years. But though the rewards speak for themselves, the costs are no less significant. Robotic coaching is poor preparation for the robot age that lies ahead for the students, which will demand more and more critical and conceptual thinking. Plus, a rigid pipeline to institutes of excellence ends up hurting them too. By its very nature, groupthink limits goals and visions and thus achievements. This is not at all a problem with an easy solution. Yet, to prepare students for a professional life where professions may disappear one after another, address it we must. How to put inventiveness, creativity, humanity back into learning processes is the great challenge for the country's education ecosystem today.

दैनिक भास्कर

Date:20-06-23

उत्तर भारत में विज्ञान के प्रति कम रुचि के मायने

संपादकीय

जेईई मेंस में टॉप दस में छह हैदराबाद जोन से हैं। एक ताजा अध्ययन में पाया गया है दक्षिण भारत के शिक्षार्थी जहां विज्ञान को अपनी प्रमुख पसंद के रूप में चुन रहे हैं, वहीं उत्तर भारत के विद्यार्थी आर्ट्स को। वर्ष 2022 में कक्षा 11-12 के विभिन्न राज्य शिक्षा बोर्ड्स से मिले आंकड़ों के अनुसार तमिलनाडु, तेलंगाना और आंध्र प्रदेश में क्रमश: 1.53, 2.01 और 2.19% विद्यार्थियों ने आर्ट्स चुना जबकि पश्चिम बंगाल, पंजाब, हरियाणा, गुजरात और झारखण्ड में विज्ञान क्रमशः 13.42, 13.71, 15.63, 18.33 और 22.9 प्रतिशत विद्यार्थियों की पसंद रहा । इसके ठीक उलट आर्ट्स को गुजरात में 81.5%, बंगाल में 78.94, पंजाब में 72.89, हरियाणा में 76.76 और राजस्थान में 71.23% विद्यार्थियों ने चुना । एनसीईआरटी का नया विभाग 'परख' इन आंकड़ों का सामाजिक- शैक्षणिक विश्लेषण करेगा। लेकिन समाजशास्त्रियों के लिए भी ये आंकड़े चुनौती वाले हैं। एक ऐसे दौर में जब टेक्नोलॉजी व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन के हर आयाम को प्रभावित कर रही हो, जब एआई क्रांतिकारी बदलाव ला रही हो, किसी एक राज्य या क्षेत्र का रुझान दूसरे से इतना अलग होना चिंता की बात है। आर्ट्स के विषय ज्ञान का वह क्षेत्र हैं, जिसका उपयोग समाज अतीत के अनुभवों का लाभ वर्तमान मूल्यों को स्थापित करने और संस्कृति, सभ्यता और कला को और परिमार्जित करने के लिए करता है। लेकिन विज्ञान और टेक्नोलॉजी उत्पादन को सहज, सस्ता, और सुलभ बनाकर भौतिक सुखों में इजाफा करता है। पिछली कुछ सदियों में कई सभ्यताएं कला में तो समृद्ध रहीं लेकिन विज्ञान में पिछड़ने के कारण उनपर अन्य अपेक्षाकृत कमतर सभ्यताओं ने शासन किया। सरकार की कोशिश है कि हिंदी माध्यम से ही सही विज्ञान के प्रति रुझान बढ़े।

Date:20-06-23

मणिपुर में समस्या बन गई है राज्य सरकार

शेखर गुप्ता, (एडिटर-इन-चीफ, 'द प्रिन्ट')

यदि आप जानना चाहते हैं कि भारत के लिए आंतरिक या बाहरी स्तर पर सबसे बड़ा तात्कालिक सुरक्षा खतरा क्या है तो कृपया अधिकांश टीवी न्यूज चैनलों का सहारा न लें। इससे आप भ्रमित हो सकते हैं और आपको लग सकता है कि यह

पश्चिम बंगाल पंचायत चुनावों में हिंसा है। थोड़ा आगे बढ़कर पूर्व की ओर देखें, नक्शे पर मणिपुर तलाशें। बशर्ते, आपको लगता हो कि आपके लिए यह कुछ मायने रखता है!

यह राज्य आज एक ऐसी अराजक स्थिति में घिरा है जो दशकों से भारत के किसी भी अन्य हिस्से में नजर नहीं आई है। इस तरह की चुनौतियां 50 के दशक (नगालैंड), 60 के दशक (मिजोरम) या 80 के दशक की शुरुआत (पंजाब और असम) में सामने आ चुकी हैं। लेकिन अब 2023 में, केंद्र और राज्य में भाजपा के पास अलग तरह की शक्ति और संचार, रसद, सैन्य-अर्धसैनिक बलों की ऐसी उपलब्धता के बावजूद यह सब? खासकर, जब राज्य की शक्तियों को मजबूती देने की बात आती है तो वर्तमान के लिए अतीत का सहारा नहीं लिया जा सकता। 80 के दशक की शुरुआत में- जब तीन सक्रिय विद्रोह (नगा, मिजो, मणिपुरी) काफी उग्र बने हुए थे और असम भी अराजकता की चपेट में था- संचार व्यवस्था इस कदर लचर थी कि एक रिपोर्टर के तौर पर मुझे अपनी कम से कम दो स्टोरी नगालैंड में मोकोकचुंग स्थित टेलीग्राफ दफ्तर की मॉर्श मशीन से फाइल करनी पड़ती थीं। कमजोर या लगभग नहीं के बराबर संचार के साधनों ने उग्रवाद प्रभावित क्षेत्रों में शासन का काम बेहद कठिन बना रखा था, लेकिन अब ऐसी दलीलें नहीं दी जा सकतीं।

अतीत में, पूर्वोत्तर और अन्य जगहों पर भी एक समुदाय की तरफ से दूसरे को निशाना बनाया जाता रहा है। असम में बांग्लाभाषी, और खासकर मुस्लिम बांग्लाभाषी अक्सर हिंसा का शिकार बने। लेकिन राज्य ने तुरंत कार्रवाई की, और कड़े कदमों की बदौलत इन पर काबू पाने में सफल भी रहा। त्रिपुरा में, हमने तादाद में कम रहे आदिवासी अल्पसंख्यकों (आबादी 25 फीसदी से कम) को बहुसंख्यक बंगालियों की लक्षित हत्याओं को अंजाम देते देखा है। इनमें पहला और सबसे कुख्यात हमला 8 जून, 1980 को अगरतला के पास हुआ मंडई नरसंहार था, जिसमें 400 से 600 निर्दोष ग्रामीणों ने जान गंवाई। हालांकि इस पर भी तत्परता से काबू पा लिया गया। जम्मू-कश्मीर में तो 1990 में उस समय महीनों तक केंद्र और राज्य का हालात पर कतई नियंत्रण नहीं रहा, जब वी.पी. सिंह प्रधानमंत्री थे। राज्य की हरसंभव कोशिशों के बावजूद स्थिति काबू में आने का नाम नहीं ले रही थी। फिर भी वहां पुलिस शस्त्रागारों से हजारों हथियार बिना किसी तरह के प्रतिरोध के नहीं लूटे जा रहे थे। मणिपुर में तो लुटेरे इतने निर्लज्ज हैं कि अपने आधार कार्ड तक छोड़ जाते हैं ताकि जांच हो तो पुलिस वाले 'मदद' कर सकें।

पूर्वोत्तर में सबसे खराब दौर संभवत: उस समय आया था जब इंदिरा गांधी को प्रधानमंत्री की कुर्सी संभाले महज कुछ हफ्ते ही बीते थे। मिजो विद्रोहियों ने उस क्षेत्र को 'सम्प्रभु मिजोरम' घोषित कर दिया था जो उस समय तक असम का महज एक जिला (लुशाई हिल्स) था, और वे उपायुक्त कार्यालय और स्थानीय असम राइफल्स बटालियन मुख्यालय कब्जाने के करीब भी पहुंच चुके थे। जवाब में इंदिरा गांधी ने भारतीय सेना को हवाई हमलों और बमबारी का आदेश दे डाला। हालांकि आज भी इस कदम को जरूरत से ज्यादा सख्ती भरा और विवादास्पद माना जाता है। लेकिन इसने विद्रोह को इतना दबा दिया कि सेना का पहला दस्ता (पांचवीं पैरा का) करीब 200 किमी दूर मैदानी इलाकों से आराम से वहां तक पहुंच सके।

वर्ष 1981-83 के बीच पंजाब में भिंडरांवाले की सक्रियता के साथ आतंकी हत्याओं का पहला दौर शुरू हो चुका था। केंद्र और राज्य की सत्ता में कांग्रेस पार्टी की वापसी हुई थी। दरबारा सिंह मुख्यमंत्री थे। जब एक प्रमुख अखबार के मालिक-सम्पादक (लाला जगत नारायण, पंजाब केसरी) और एक पुलिस डीआईजी (ए.एस. अटवाल) की हत्या ने देश को हिलाकर रख दिया, तब श्रीमती गांधी ने क्या किया? उन्होंने अनुच्छेद 356 का इस्तेमाल कर अपनी ही पार्टी की सरकार और

मुख्यमंत्री को बर्खास्त कर दिया और राष्ट्रपति शासन लगा दिया। हालांकि इससे पंजाब की चुनौतियां खत्म नहीं हुईं। लेकिन इसने खतरे और शासन की नाकामी को स्वीकारने की इच्छाशक्ति का संकेत जरूर दिया।

मौजूदा समय में मणिपुर की राज्य सरकार समस्या की वजह है, समाधान नहीं। बीरेन सिंह सरकार को किसी भी पक्ष का भरोसा हासिल नहीं है, इसके शीर्ष पदाधिकारी परिदृश्य से नदारद हैं, और कानून-व्यवस्था बनाए रखने की जिम्मेदारी को 'सलाहकार' और बाहर से भेजे गए अधिकारी निभा रहे हैं।

इसका सत्ता में बने रहना दोनों ही पक्षों की भावनाएं भी भड़का रहा है। कुकी इसे बहुसंख्यकवादी एजेंडा बढ़ाने वाली पक्षपाती सरकार के रूप में देखते हैं, जबकि मैतेई समुदाय इसे व्यापक स्तर पर उनका चुनावी समर्थन हासिल करने के बावजूद उनकी रक्षा करने में अक्षम मानता है। ऐसी कई बातें हैं जो मणिपुर के मौजूदा संकट को अभूतपूर्व बनाती हैं। हमारे इतिहास में ऐसा पहली बार हो रहा है कि दो समुदाय एक-दूसरे के खिलाफ बड़ी संख्या में स्वचालित हथियार इस्तेमाल कर रहे हैं, जो हमारे अधिकांश वर्दीधारी सुरक्षा बलों तक को हासिल नहीं हैं। छह सप्ताह से अराजकता का आलम है और सरकार कोई निर्णायक राजनीतिक कदम उठाने में नाकाम रही है। समस्या बहुत गहरी है।

दैनिक जागरण

Date:20-06-23

भारत की महत्ता समझता अमेरिका

ब्रह्मा चेलानी, (लेखक सामरिक मामलों के विश्लेषक हैं)

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अमेरिका यात्रा पर न केवल दोनों देशों, बल्कि पूरी दुनिया की नजरें लगी होंगी। एक नामी-गिरामी अंतरराष्ट्रीय पत्रिका ने हाल में अपनी आवरण कथा में भी लिखा है कि भारत-अमेरिका मित्रता कैसे 21वीं सदी के समीकरण बदल सकती है और भारत किस प्रकार अमेरिका के लिए अपरिहार्य बन गया है। दोनों देश प्रधानमंत्री मोदी की इस यात्रा को सफल बनाने के लिए पूरी तैयारी में जुटे हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन ने प्रधानमंत्री मोदी के सम्मान में व्हाइट हाउस में एक भोज भी रखा है। इस दौरान मोदी संभवत: तीन अरब डालर के ड्रोन सौदे के रूप में बाइडन को एक खास तोहफा देंगे, लेकिन बड़ा सवाल यही है कि बदले में मोदी को क्या मिलेगा?

इसमें कोई संदेह नहीं कि इस समय भारत और अमेरिका संबंध विश्व में सबसे तेजी से बढ़ते द्विपक्षीय संबंधों में से एक हैं। प्रधानमंत्री के रूप में मोदी की यह आठवीं अमेरिका यात्रा होगी तो बाइडन के राष्ट्रपति काल में तीसरी। रूस और चीन की दोहरी चुनौती को लेकर सशंकित अमेरिका में भारत के प्रति झुकाव एवं गंभीरता बढ़ती जा रही है। भारत न केवल जनसंख्या में मामले में चीन से आगे निकल गया है, बल्कि उसकी आर्थिक वृद्धि दर भी चीन से तेज है। वास्तव में आज भारत दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ रही बड़ी अर्थव्यवस्था है, जो ब्रिटेन को पीछे छोड़कर जर्मनी को पछाड़ने की राह पर है। भारत को हथियारों की बड़े पैमाने पर बिक्री से भी अमेरिकी नीतियों में भारत की महत्ता बढ़ी है। इसे इससे

समझा जा सकता है कि कई मुद्दों पर बुरी तरह विभाजित अमेरिकी राजनीति में विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के साथ रणनीतिक साझेदारी को लेकर गजब की सहमति है। दोनों दलों के नेताओं ने मोदी को अमेरिकी कांग्रेस में संबोधन के लिए आमंत्रित किया है। इस दौरान मोदी दूसरी बार अमेरिकी संसद के संयुक्त सत्र को संबोधित करेंगे। मोदी की यात्रा से ठीक पहले अमेरिकी रक्षा मंत्री लायड आस्टिन और राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार जेक सुलिवन अलग-अलग भारत का दौरा कर चुके हैं।

उथल-पुथल और प्रतिस्पर्धा से गुजर रही दुनिया में अमेरिका भारत को अपने निकट सहयोगियों के रूप में शामिल करना चाहता है। इसका ही परिणाम है कि वैश्विक आपूर्ति शृंखला पर चीनी दबदबे को घटाने के लिए अमेरिका भारत को मुख्य साझेदार के रूप में देख रहा है। अमेरिकी वित्त मंत्री जेनेट येलेन कह चुकी हैं कि आपूर्ति शृंखला से जुड़े मौजूदा जोखिमों को दूर करने के लिए हम सहयोगी देशों के साथ संभावनाएं तलाश रहे हैं और इसी कड़ी में हम भारत जैसे भरोसेमंद साझेदार के साथ आर्थिक रिश्तों को सक्रियता के साथ गहराई प्रदान कर रहे हैं। सामरिक सहयोग में भी दोनों देश नए आयाम गढ़ रहे हैं। इसमें दोनों देशों के सैन्य ठिकानों-सुविधाओं तक पहुंच के साथ ही संवेदनशील सूचनाओं की साझेदारी भी शामिल है। किसी भी अन्य देश की तुलना में भारत ने अमेरिका के साथ कहीं ज्यादा साझा सैन्य अभ्यास किए हैं। क्वाड को सामरिक तेवर देने में भी भारत का जुड़ाव अहम है। भारत की बढ़ती आर्थिक एवं सैन्य शक्ति ने उसे एशिया और विस्तृत एशिया-प्रशांत क्षेत्र में शक्ति संतुलन की दृष्टि से महत्वपूर्ण बना दिया है। अमेरिकी रक्षा मंत्री के अनुसार अमेरिका-भारत साझेदारी ही हिंद-प्रशांत क्षेत्र की शांति एवं सुरक्षा के मूल में है। यही क्षेत्र विश्व में भू-राजनीतिक एवं आर्थिक केंद्र के रूप में उभर रहा है।

द्विपक्षीय संबंधों के परवान चढ़ने के बावजूद पश्चिम में इन रिश्तों को लेकर शंकालुओं की कमी नहीं। अमेरिका में एक टिप्पणीकार ने जहां यह एलान किया कि भारत कभी अमेरिका का साझेदार नहीं बन सकता तो दूसरे ने इसे अमेरिका का गलत दांव बताया कि इससे चीन के साथ अमेरिकी भू-राजनीतिक प्रतिस्पर्धा और तेज हो सकती है। दरअसल ऐसे लोगों को इससे आपत्ति हो सकती है कि भारत अमेरिका के साथ संबंध अपनी स्वतंत्र विदेश नीति के आधार पर आगे बढ़ाना चाहता है। यह शीत युद्ध वाला वह दौर नहीं कि रिश्तों में अमेरिका 'पहिया' और साझेदार उसकी 'कमानी' बने रहें। स्पष्ट है कि भारत जितना बड़ा देश अमेरिका के लिए कोई जापान या जर्मनी नहीं बन सकता। इसी कारण विश्लेषक यह भी मानते हैं कि भारत की एक अनूठी रणनीतिक प्रकृति है और वह अमेरिका का साझेदार न होकर स्वयं एक स्वतंत्र महाशक्ति के रूप में उभरेगा। संभवत: अमेरिका भी इस पहलू को समझता है और वह अपने अन्य सहयोगियों के साथ किए गए अनुबंध-आधारित समझौतों के बजाय भारत के साथ 'साफ्ट अलायंस' चाहता है, जिसमें किसी समझौते की आवश्यकता नहीं होती। इसीलिए भारत-अमेरिका रिश्तों को अमेरिका में 21वीं सदी के सबसे महत्वपूर्ण संबंधों की संज्ञा देने के साथ ही उनमें लोगों के बीच संपर्क बढ़ाने के अलावा तकनीकी स्तर पर साथ मिलकर काम करने के मोर्चे पर अधिक निवेश की मांग हो रही है।

मोदी के दौर में भारत में बमुश्किल ही गुटनिरपेक्षता का उल्लेख होता है। इसके बजाय भारत बहु-पक्षीयता की ओर बढ़ रहा है। वह रूस जैसे पारंपरिक साझेदार को साध रहा है तो लोकतांत्रिक शक्तियों के साथ रिश्ते मजबूत करने पर ध्यान केंद्रित कर रहा है। जहां अमेरिका के साथ भारत अंतरिक्ष, अगली पीढ़ी की दूरसंचार तकनीक से लेकर सेमीकंडक्टर आपूर्ति शृंखला जैसे क्षेत्रों में साझेदारी कर रहा है तो रूस के साथ रिश्ते मुख्य रूप से रक्षा एवं ऊर्जा तक ही सिकुड़ रहे हैं। एक समय नई दिल्ली चीन के मुकाबले मास्को को एक कारगर काट के रूप में देखती थी, लेकिन समय के साथ बदले समीकरणों में मास्को और बीजिंग की नजदीकियां बढ़ी हैं। चीन-रूस रणनीतिक साझेदारी न अमेरिका के हित में हैं

और न ही भारत के। इसीलिए चीन, भारत-अमेरिका संबंधों की दिशा में एक महत्वपूर्ण कारक बना रहेगा। सितंबर में भारत को जी-20 सम्मेलन की मेजबानी करनी है। इसमें बाइडन, चीनी राष्ट्रपति शी चिनफिंग, रूसी राष्ट्रपति पुतिन सहित अन्य दिग्गज नेताओं की सहभागिता संभव है। तब वैश्विक प्रतिद्वंद्वियों के बीच नई दिल्ली के लिए संतुलन साधना आसान नहीं होगा, क्योंकि अमेरिका के साथ उसके रिश्ते निरंतर प्रगाढ़ हो रहे हैं और मोदी के दौरे से यह प्रमाणित हो जाएगा।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:20-06-23

उर्वरक कीमतों में समता

संपादकीय

कृषि लागत एवं मूल्य आयोग (सीएसीपी) ने हाल ही में यह अनुशंसा की है कि सबसे आम इस्तेमाल वाले उर्वरक यानी यूरिया को भी अन्य उर्वरकों की तरह पोषण आधारित सब्सिडी (एनबीएस) प्रणाली के तहत लाया जाना चाहिए। इस मांग का लक्ष्य यही है कि नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश और पौधों को पोषण देने वाले अन्य पोषक तत्त्वों से बने उर्वरकों की कीमतों में समता स्थापित की जा सके ताकि उनका संतुलित और जरूरत के मुताबिक इस्तेमाल किया जा सके। अन्य उर्वरकों की तुलना में यूरिया की अनावश्यक रूप से कम कीमत के परिणामस्वरूप नाइट्रोजन का अत्यधिक इस्तेमाल होने लगा तथा समान महत्त्व वाले अन्य पोषकों के इस्तेमाल में कमी देखने को मिली। इनमें से कुछ अहम सूक्ष्म और द्वितीयक पोषक भी हैं जिनका इस्तेमाल पौधों में किया जाता है। मिट्टी की सेहत तथा उसकी उर्वरता पर भी इनका गलत असर हुआ है। इसका नतीजा यह हुआ कि उतनी ही फसल हासिल करने के लिए पोषक तत्त्वों की ऊंची खुराक का इस्तेमाल करना पड़ रहा है। अगर हालात ऐसे ही बने रहे तो यह खेती के लिए अच्छा नहीं होगा। खासतौर पर कृषि से होने वाला मुनाफा प्रभावित होगा जो पहले ही काफी कठिनाइयों से जूझ रहा है।

यूरिया पर सीएसीपी की सलाह न तो नई है और न ही वह कुछ अलग है। कृषि वैज्ञानिक 2010 में एनबीएस व्यवस्था की अवधारणा सामने आने के बाद से ही इसकी मांग करते रहे हैं ताकि उर्वरक सब्सिडी में समता स्थापित की जा सके। बहरहाल तत्कालीन संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार ने इसे नहीं माना क्योंकि यूरिया की कीमत तय करना अभी भी राजनीतिक दृष्टि से संवेदनशील मसला है। यही कारण है कि उर्वरक सब्सिडी में इजाफा जारी रहा और 2022-23 में यह बढ़कर 2.3 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच गई। इस बीच यूरिया की खपत में तेज इजाफा हुआ और यह 33 फीसदी से ज्यादा बढ़ गया जबकि अन्य उर्वरकों के इस्तेमाल में मामूली इजाफा हुआ। पोषण के इस्तेमाल में असंतुलन और बढ़ता

गया जो मिट्टी की सेहत के लिए कतई अच्छा नहीं है। मौजूदा राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार के सामने भी ऐसी ही दुविधा है। अगले वर्ष आम चुनाव होने हैं और ऐसे में बेहतर होगा कि वह कम से कम राजनीतिक दृष्टि से कम मु श्किल सुझाव का पालन करे और प्रति किसान यूरिया के सब्सिडी वाले बैग की सीमा तय कर दे। इसके अलावा यह काम आसानी से किया जा सकता है क्योंकि सब्सिडी वाले उर्वरकों की बिक्री डिजिटल मशीनों के माध्यम से की जाती है और खरीदार की पहचान आधार या अन्य पहचान प्रमाणों के माध्यम से दर्ज की जाती है।

सरकार भी पोषकों के इस्तेमाल में असंतुलन के असर से पूरी तरह नावाकिफ नहीं है। उस पर यह आरोप भी नहीं लगाया जा सकता है कि वह इससे निपटने के जतन नहीं कर रही है। यूरिया पर अनिवार्य तौर पर नीम की परत और सॉइल हेल्थ कार्ड जारी करना आदि का मुख्य उद्देश्य यही था कि पौधों को दिए जाने वाले पोषण को समुचित बनाने पर ध्यान दिया जाए। परंतु इन उपायों से वांछित परिणाम नहीं मिले। ताजा अनुमान बताते हैं कि नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश के इस्तेमाल का अनुपात 4:2:1 के बजाय 13:5:1 है। ऐसे में प्रतीत होता है कि कीमतों को समुचित बनाकर ही इस असंतुलन को दूर किया जा सकता है।

साथ ही यह उर्वरक क्षेत्र में मूल्य सुधार अपनाने का सबसे बेहतर समय भी है। यूरिया का घरेलू उत्पादन बढ़ रहा है और आयात की जरूरत तेजी से कम हो रही है। ऐसा इसलिए हुआ कि बंद पड़े उर्वरक संयंत्र चालू हो गए हैं और नया नैनो यूरिया बन चुका है जिस पर किसी सब्सिडी की जरूरत नहीं है। इसके अलावा अंतरराष्ट्रीय बाजार में उर्वरकों की कीमत भी कम हुई है। फरवरी 2022 में रूस और यूक्रेन के बीच जंग छिड़ने के साथ ही कीमतें आसमान छूने लगी थीं। ऐसे में सरकार को इस अवसर का लाभ लेना चाहिए और सीएसीपी की अनुशंसा के मुताबिक उर्वरक कीमतों में समता लानी चाहिए।